International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(4): 26-28

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(4): 26-28
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 18-05-2019
Accepted: 20-06-2019

Dr. Mona Bala
Guest Faculty, P.G. Department of Sanskrit, Patna University, Patna, Bihar, India

Correspondence
Dr. Mona Bala
Guest Faculty, P.G. Department of Sanskrit, Patna University, Patna Bihar, India

अथर्ववेद में राष्ट्र एवम् राजा की परिकल्पना

Dr. Mona Bala

सरांश
अथर्ववेद में राजनीति शास्त्र के महत्त्वपूर्ण अंग पर वार्ता हुई है। अथर्ववेद में राष्ट्र की सर्वश्रेष्ठता प्रतिपादित की गई है। राष्ट्र एवं उसके रक्षक राजा का वर्णन कई सूक्तों में वर्णित है। राष्ट्र, राजा एवं राजकृत का वर्णन अथर्ववेद में सर्वत्र है। राजा राष्ट्र की महिमा को बढ़ाने वाला एवं सम्पन्न करने वाला होता है। राजा को प्रजा की आत्मा एवं शुभचिन्तक बताया गया है।
राष्ट्र की सर्वोच्च सत्ता राजा होता है जो प्रजा हित में अपना कार्य करता है। राजा राष्ट्र रिपुओं को अपने पौरूष से पराजित कर देता है, साथ ही राष्ट्र की प्रतिष्ठा बढ़ाता है। अथर्ववेद में राजन् एवं राष्ट्र की मूल अवधारणा का साक्षात्कार होता है।

कूट शब्दः राष्ट्र, राजा, प्रजा, अमित्रसेना, शत्रुविनाशक।

प्रस्तावना
वेद शब्द का निर्माण विद् धातु में घञ प्रत्यय लगने से हुआ है, जिसका अर्थ 'ज्ञान' होता है। यह ज्ञान मानवीय नहीं होकर पूर्णरूपेण ईश्वरीय है। ईश्वर द्वारा मानव को दिया हुआ ज्ञान है। सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा द्वारा यह ज्ञान अन्य उत्तरकालीन ऋषियों को भी प्राप्त हुई। अथर्ववेद को प्रायः चतुर्थवेद के रूप में स्थान प्राप्त है। वैसे तो वेदत्रयी ही मान्य रहे हैं परन्तु तीनों वेदों की मिश्रित विद्या को चतुर्थ वेद अर्थात् अथर्ववेद के रूप में जाना जाता है। इस प्रकार वैदिक साहित्य में चार वेद मान्य है–1.ऋग्वेद, 2.यजुर्वेद, 3.सामवेद एवं 4.अथर्ववेद। इनके वर्ण्य विषय में अन्तर होने से यह एक–दूसरे से अलग हैं। मैक्डोनल महोदय एवं विन्टरनिज महोदय जैसे पाश्चात्य विद्वानों ने अथर्ववेद को चतुर्थ वेद मानने के पीछे का आधार कालक्रम से परवर्ती होना माना है।
अथर्ववेद में आए विषय वस्तु का सम्बन्ध व्यवहारिक जीवन के आस–पास आने वाले सभी तत्त्वों से है। अथर्ववेद में रोगों, स्वास्थ्य, अभिचारण स्त्रियों से सम्बन्ध, राजकर्म विषयक, ब्राह्मण के हित की प्रार्थना, पाप, अशुद्धि, स्वर्ग सम्बन्धी आध्यात्मिक सूक्त, याज्ञिक सूक्त, विवाह, अंत्येष्टि एवं कुन्ताप सूक्त हैं।
अथर्ववेद में शास्त्रीय विषय के साथ मानव–जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का वर्णन प्राप्त होता है। अथर्ववेद में राजनीति से जुड़ी कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य रखे गये हैं। अथर्ववेद में राज्य और राष्ट्र की धारणाओं को एक उन्नत आदर्श स्तर पर रखा गया है। सम्भवतः मानव इतिहास में प्रथम बार मातृभूमि की कल्पना प्रसिद्ध भूमि सूक्त में प्राप्त होती है, उसमें यह उद्घोषणा की गयी है–

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः। [1]

अर्थात् भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ। एक राष्ट्र के रूप में पृथ्वी नाना जातियों वाले, भिन्न–भिन्न भाषाओं को बोलने वाले विभिन्न धर्मों वालों का एक समान भरण–पोषण करती है। अथर्ववेद में कहा गया है कि राष्ट्र का निर्माण दीक्षा और तपस्या से होता है, तभी उसमें बल और ओज की सृष्टि होती है।

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तदस्यै देवा उपसंनमन्तु।। [2]

अथर्ववेद में राष्ट्र के प्रति नत भाव रखने वाले मंत्र भी मिलते हैं जिसमें कहा गया है कि मुझमें क्षत्र, मुझ में रयि धारण कराओ, ताकि मैं राष्ट्र के अभीवर्ग में उत्तम बनूँ।

मयि क्षत्रं पर्णमणे मयि धारयताद् रयिम्।
अहं राष्ट्रस्याभीवर्गे निजो भूयासमुत्तमः।। [3]

अथर्ववेद में राष्ट्रदेवी सूक्त है जिसके अनुसार राष्ट्र देवी रूद्रगण एवं वसुगणों के साथ भ्रमण करती है और मित्र वरूण इन्द्र, अग्नि और अश्विनीकुमार सब को धारण करती हैं।

अहं राष्ट्री सैंमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम्।
तां मा देवा व्यदधुः पुरूत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तः।। [4]

अर्थात् मैं वाग्देवी और धन प्रदात्री हूँ। मैं ज्ञानवती एवं यज्ञोपयोगी देवों में सर्वोत्तम हूँ। मेरा स्वरूप विभिन्न रूपों में विद्यमान है तथा मेरा आश्रय स्थान विस्तृत है। सभी देव विभिन्न प्रकार से मेरा ही प्रतिपादन करते हैं। राष्ट्र की परिकल्पना साकार एवं सटीक वर्णन प्राप्त होता है राष्ट्र सम्पन्न हो, ज्ञानवान हो धर्म के कृत होते हो राष्ट्र के हर कृत में विकास का भाव हो इतने प्राचीन साहित्य में इतने नवीन भाव राष्ट्र की परिकल्पना को पूर्ण करते हैं। इस सूक्त में राष्ट्र के सर्वोन्नत होने की बात कही गयी है।
राष्ट्र होगा तो उसे व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए राजा की आवश्यकता पड़ेगी। अथर्ववेद में राजा (राजन्) से सम्बन्धित मंत्र उपलब्ध है। राजा के विषय में कहा गया है कि राजा धन का अधिपति होगा, वह विशः का अधिपति होगा, इसमें महान तेज होगा जिससे वह शत्रुओं को अपने वर्चस् से हीन करेगा अर्थात् शत्रुओं को खत्म कर देगा।

अयमस्तु धनपतिर्धनानामयं विशां विश्वपतिरस्तु राजा।
अस्मिन्निद्र महि वर्चासि धेहयवर्चसं कृणुहिं शत्रुमस्य।। [5]

ग्रिफिथ महोदय ने विश्पति का अर्थ 'Master of the people' किया है। राजा में प्रजा की शक्ति निहित होने का वर्णन प्राप्त होता है। यह राजा सोने, चाँदी आदि धन तथा प्रजाओं का स्वामी हो, हे इन्द्र इस राजा में रिपुओं को पराजित करने वाला तेज स्थापित करें। मनुस्मृति में भी राजा की महता बताते हुए कहा गया है कि प्रभु ने समाज एवम् राज्य की रक्षा हेतु राजा को बनाया।

रक्षार्थमस्य सर्वस्य राजानमसृजत्प्रभुः। [6]

यदि राजा न हो तो जगत में घोर भय एवम् व्याकुलता फैल जायेगी। अनुशासनहीन के कारण राष्ट्र कमजोर एवं क्षीण भिन्न हो जाएगा।
अथर्ववेद में कहा गया है प्रजाएँ राजा को शासन चलाने के लिए स्वीकृत करें अर्थात् राजा का चुनाव प्रजा द्वारा होता था साथ ही प्रजा के हित हेतु राजा जिम्मेवार होता था। एक अन्य ऋचा में कहा गया है कि. विभिन्न देशों के राजा और राजाओं का अभिषेक करने वाले हैं तथा जो सूत और ग्राम नायक हैं उन सभी को आप हमारे चारों ओर उपस्थित करें। अर्थात् शासन व्यवस्था के प्रत्येक अंग द्वारा राजा का अनुमोदन होता होगा।

अथर्ववेद में राज्याभिषेक सूक्त में भी राजा को शत्रुविनाशक कहा गया है–

अभि प्रेहि माम वेन उग्रश्चेत्ता सपत्नहा।
आ तिष्ठ मित्रवर्धन तुम्यं देवा अधि ब्रवन।। [7]

इस ऋचा में कहा गया है कि चेतना के संचालक तेजस्वी आप शत्रु विनाशक होकर आगे बढ़े, पीछे न हटें, आप मित्रों का सम्वर्द्धन करने वाले हो, आप भली भांति स्थापित हो। सदैव राजा से शत्रु से रक्षा के लिए बताया गया है उसे बारम्बार वीर एवं पौरूषशाली बताया गया है।

राजा को इन्द्र का प्रिय बताया गया है साथ ही गायों, ओषधियों और पशुओं का भी प्रिय बताया गया है अर्थात् राजा राज्य (राष्ट्र) की उन्नति के लिए जिम्मेवार होता है। इसी कारण गायों से सम्पन्नता, औषधियों से स्वास्थ्य और पशुओं से विभिन्न कार्य जैसे कृषि आदि का प्रिय कहा गया है। अथर्ववेद में राजा के लिए कामना की गई है कि उसे विजय मिले तथा पराजय कभी न मिले। एक ऋचा में कहा गया है कि राजन् जो तुम्हारे शत्रु हैं वे नीचे जाएंगे और तुम विशिष्ट अथवा उत्तम रहोगे। राजा से यह कहा गया है कि तुम शत्रु के समान आचरण करने वालों का भोजन तक छीन लो–

उत्तरस्त्वमधरे ते सपत्ना ये के च राजन् प्रतिशत्रवस्ते।
एकवृष इन्द्रसखा जिगीवाञ् छत्र यतामा भरा भोजनानि।। [8]

हे राजा आप सर्वश्रेष्ठ हो और आपके रिपु निम्नकार के हों। जो शत्रु आपसे प्रतिकूल व्यवहार करते हैं, वे भी नीचे गिरें। इन्द्रदेव की मित्रता से आप अद्वितीय बलवान बन कर शत्रु का धन, ऐश्वर्य छीन लें। इसमें स्पष्ट कहा गया है कि राजा द्वारा शत्रु का दमन किया जाए एवं हारे हुए शत्रु का धन, ऐश्वर्य सब छीन लाओ अर्थात् वैदिक युगीन रिपुओं को जीत राजा अपना पौरूष दिखाता था साथ ही पराजित शत्रु के धन से अपने कोष की वृद्धि करता था।
राजा को सिंह का प्रतीक बताया गया है साथ ही बार–बार एकवृष कह कर सम्बोधित किया गया है। डा. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा ने एकवृषत्व की संज्ञा को सार्वप्रिय सम्प्रभुता से जोड़ा है। [9]
अथर्ववेद में राजा के चुनाव के मंत्र भी उल्लेखित हैं। राजा में राष्ट्र का समावेश बता कर जन पति तुम राष्ट्र के लिए गुणी एवं योग्य बनो–

आ त्वा गन् राष्ट्रं सर्चसोदिहि प्राड.विशां पतिरेकराट् त्वं विराज ।
सर्वास्त्वा राजन् प्रदिशो ह्वयन्तूपसद्यो नमास्यो भवेह ।। [10]

हे राजन् तुम में राष्ट्र आ गया है, वर्चस् के साथ आगे बढ़ो, तुम जनता के पति एक राष्ट्र हो और विराजमान होओ। हे राजन् सारी प्रदिशाएँ तुम्हें पुकारें। तुम समीप जाने योग्य हो और नमस्करणीय बनो। अथर्ववेद में राजा की शक्ति, योग्यता एवं जनप्रियता पर सीधी बात की गयी है। राजा से धन एवम् जन–धन की प्राप्ति कर सकेगा इसका भाव भी समक्ष रखा गया है। राजा का चुनाव प्रजा करती थी, अथर्ववेद की एक ऋचा में इसका स्पष्ट संकेत प्राप्त होता है–

त्वां विशो वृणतां राज्याय त्वामिमाः प्रदिशः पञ्च देवीः।
वर्ष्मन् राष्ट्रस्य ककुदि श्रयस्य ततो न उग्रो वि भजा वसूनि।। [11]

अर्थात् तुम्हें विश (प्रजा) राज्य के लिए चुनें, ये पाँच दिव्य दिशाएँ भी चुनें, राष्ट्र के उच्च स्थान पर विराजो, उग्र हो, वहाँ से हमें धन प्राप्त कराओ। ग्रिफिथ महोदय ने विश का अनुवाद 'tribemen किया है साथ ही उग्र से अर्थ 'mighty man' किया है। यहाँ उग्र का प्रयोग शक्तिशाली अर्थ का प्रबोधन तो अवश्य करता है। राजा अपने श्रेष्ठ कार्यों को करते हुए सौ वर्षों तक अपना राज्य चलायें।

इहेदसाय न परो गमाथेर्यो गोपाः पुष्टपतिर्व आजत्।
अस्मै कामायोप कामिनीर्विश्वे को देवा उपसंयन्तु।। [12]

यहाँ राष्ट्र के प्रजा की शक्ति का भान होता है, जिसमें कहा गया है कि हे शरीर या राष्ट्र में रहने वाली प्रजाओं आप यही रहें दूर न जाएँ। विद्याओं से युक्त गौ के रक्षक, पुष्टि प्रदाता आपको लाएँ। कामनायुक्त आप प्रजाओं को इस कामना की पूर्ति के लिए विश्वदेव एक साथ संयुक्त करें।

मयि क्षत्रं पर्णमणे पयि धारयताद् रयिम्।
अहं राष्ट्रस्याभीवर्गे निजो भूयासमुतमः।। [13]

हे पर्णमणे। आप हमारे अन्दर शक्ति तथा ऐश्वर्य स्थापित करें, जिससे हम राष्ट्र के विशिष्ट वर्ग में उत्तम आत्मीय बन कर रहें। राष्ट्र राजा द्वारा ऐसी प्रार्थना उसकी योग्यता एवं राष्ट्र के प्रति उसकी प्रतिबद्धता का द्योतक है।
राजा भी प्रार्थना करता है जो उसकी प्रजा है उसके आज्ञाकारी या अधीनस्थ रहे साथ ही समाज का हर छोटा बड़ा वर्ग उसका समर्थक हो–

ये राजानो राजकृतः सूता ग्रामण्यश्च ये।
उपस्तीन् षर्ण मह्यं त्वं सर्वान् कृण्वभितो जनान्।। [14]

राजा को जन्मजात वीर पुरूष बताया गया है। राष्ट्र की रक्षा हेतु राजा सदैव आगे रहता था। अथर्ववेद में शत्रु–प्रतिमोहन और प्रतिदहन की ऋचाएँ भी हैं, जिसमें बारम्बार शत्रु को नाश की बात कही गयी है। अग्नि से प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि अग्नि तुम प्रतिकूल हो जाओ, दुर्वाचक और दुश्मन को दग्ध (जलाओ) करते हुए हमारे सपत्नों के चित्रों को मुग्ध कर दो। जातवेदा अग्नि उन्हें हस्तहीन कर दे।

इन्द्र से शत्रु हन्त के लिए प्रार्थना की गई है

इन्द्र चित्तानि मोहयन्नर्वाङ.कूत्या चर।
अग्नेर्वातस्य ध्राज्या तान् विषूचो विनाशय।। [15]

अथर्ववेद में युद्ध काल में अमित्र सेना के मोहन एवं विनाश की बात कही गयी है। अग्नि एवं इन्द्र दोनों ही वेद साहित्य में सर्वाधिक सशक्त देव के रूप में वर्णित है। इन्ही देवताओं के ही अमित्र–सेना के विनाश हेतु प्रार्थनाएँ हैं। अग्नि से प्रार्थना करते हुए कहा गया है कि वो अमित्र से दग्ध तो करे ही साथ ही उन्हें मोहग्रस्त भी करें।

अमित्रसेनां मद्यवन्नक्ष्माञ् छत्रूयतोमभि।
युवं तानिन्द्र वृत्रहन्नग्निश्च दहतं प्रति।। [16]

इन्द्र से कहा गया है कि हमारे अमित्रों की सेना को मूढ़ (मूर्ख) बनाओ। अग्नि, वायु की सहायता से इन्हें विकीर्ण करे। कहने का अर्थ यह है कि शत्रुओं की विकीर्ण कर दे एवम् हर प्रकार से उसकी हानि हो।
अथर्ववेद में राष्ट्र, राजा एवं राजा के कर्त्तव्यों का वर्णन प्राप्त होता है, वेद काल की यह संकल्पना परवत्ती काल में भी प्राप्त होती रही है। राष्ट्र की कल्पना, राजा का महत्त्व एवं राज्य या राष्ट्र के राजा का कर्त्तव्य वर्णन अत्यंत मोहक एवं विशद् है जो प्राचीन भारत के राष्ट्र एवं व्यवस्था सुदृढ़ संकल्पना का प्रस्तुतीकरण है।

संदर्भ

1. अथर्ववेद– 12/1/12
2. तथैव– 19/41/1
3. तथैव –3/5/2
4. तथैव –4/30/2
5. तथैव –4/22/3
6. मनुस्मृति –7/3 का उत्तरार्ध
7. अथर्ववेद –4/9/2
8. तथैव –4/22/6
9. वैदिक राजनीतिशास्त्र, डॉ.वि.प्र.वर्मा, पृ.सं.–191, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
10. अथर्ववेद –3/4/1
11. तथैव –3/4/2
12. तथैव –3/9/4
13. तथैव– 3/5/2
14. तथैव –3/5/7
15. तथैव –3/2/3
16. तथैव –3/1/3